भाद्र शुक्ल १२, मंगलवार, दिनांक ०७-०९-१९६५
गाथा - १९९ से २००, प्रवचन - २०८

आज दसलक्षणी में से आठवाँ दिन है। त्यागधर्म-त्यागधर्म। मुनियों का त्यागधर्म क्या है? है तो त्याग चारित्र की निर्मल पर्याय। आत्मा के शुद्धस्वरूप की दृष्टि करके स्वभाव का आश्रय करके राग को छोड़ना, उसका नाम त्यागधर्म कहते हैं।

व्याख्या या क्रियते श्रुतस्य यतये, यद्दीयते पुस्तकं;
स्थानं संयमसाधनादिकमपि, प्रीत्या सदाचारिणा।
स त्यागो वपुरादिनिर्ममतया, नो किंचनास्ते यतेः;
आकिंचन्यमिदं च संसृतिहरो, धर्मः सतां सम्मतः॥१०१॥

आकिंचन थोड़ा साथ में लिया है। अकिंचन फिर नौ में आयेगा, उसका थोड़ा भाग साथ में लिया है। त्याग की व्याख्या। **शास्त्रों का भलीभाँति व्याख्यान करना...** उसको ज्ञान दान करना। दूसरे को ज्ञान यथार्थ समझाना। उसमें भी राग घटता है और दूसरे ज्ञान समझ जाये तो मेरे से (ज्ञान में) अधिक हो जाये, ऐसा मान उसको नहीं है। समझ में आया? मैं शास्त्र का व्याख्यान करूँ तो वह लोग समझ जायेंगे तो मेरे से अधिक हो जायेंगे। ऐसा अभिमान का अन्तर में त्याग होकर शास्त्र का व्याख्यान सम्यक्रूप से, सम्यकरूप से हों! भले प्रकार कहा न? ऐसे तो सब करते हैं व्याख्या। विशेष जो है, उसका स्वरूप छह द्रव्य का, वास्तविक तत्त्व का, अध्यात्म तत्त्व का ऐसा व्याख्यान करना, उसमें भी अपना पर का अहंकार छूटता है और राग घट जाता है।

और मुनियों को, धर्मात्मा को पुस्तकें देना। शास्त्र अध्यात्म आदि पुस्तक देना। शास्त्र का ज्ञान सीख जाये तो अधिक धर्म में हो तो बड़ा अच्छा है। ऐसी भावना करके अपने में निर्मानपना प्रगट करना। दूसरा समझ जाये पुस्तक वाँचकर (तो वह आगे बढ़ जायेगा, ऐसा नहीं होना चाहिए)। एक बार ऐसा हुआ था। एक पुस्तक ऐसे मिली तो

कोई किसी को दे नहीं। यदि दूसरे को दे तो उसको ज्ञान हो जायेगा। ज्ञान हो जायेगा तो मेरा मान घट जायेगा। ऐसा धर्मात्मा को होता नहीं। दूसरा सीख लो। पुस्तक सीखो, वाँचों, विचारो। राग घटाने की बात शास्त्र में है। शास्त्र में तो वीतराग होने की बात है। तो पुस्तकों में वीतराग होने की बात सिखाने में आती है। व्याख्यान में भी वह आता है। वीतरागपना सिखाना और व्याख्यान करना, वह राग का अभाव करनेरूप त्यागधर्म कहा जाता है। समझ में आया?

मुनियों को स्थान देना। रहने का स्थान। संयम के साधन। संयम के साधन आदि उसमें राग का घटाना और स्वभाव का आश्रय विशेष करके ममत्व, अहंकार छोड़ना, उसका नाम त्याग कहते हैं। **साधन पिच्छी, कमण्डल आदि...** प्रीति से देना, ऐसा शब्द पड़ा है। '**प्रीत्या**'। ऐसा नहीं कि किसी के बेगार से दबाव के कारण से भाई देना पड़े, ऐसा नहीं। प्रीति से वह ज्ञान समझे तो उनको अनुकूल साधन हो तो उसका स्वभाव सन्मुख झुकाव शिष हो अपने पुरुषार्थ से तो ऐसा प्रीति से सबको मुनियों को ऐसा त्याग करे। **सदाचारियों का उत्कृष्ट त्यागधर्म है।** सदाचरण-सत् आचरण अर्थात् स्वभाव का सत् आचरण करते हैं। शुद्ध अखण्ड आनन्दरूपी सत्स्वरूप का जो आचरण करनेवाला है, उसका वह त्यागधर्म है। बाद में तो थोड़ा अकिंचन का लिया है।

'मेरा कुछ भी नहीं है' ऐसा विचारकर, अत्यन्त निकट शरीर से भी ममता छोड़ देना, अकिंचन धर्म है। वह कल आयेगा, परन्तु थोड़ा साथ में ले लिया है। **वह यति को होता है। वह समस्त संसार का नाश करनेवाला है...** स्वभाव में राग का छूट जाना, पर को भी राग से छूटने का उपदेश करना। दूसरे को राग छूटने का ज्ञान कराने में शास्त्र देना, समझ में आया? यह सब त्यागधर्म, राग का अभाव करने का त्यागधर्म कहा जाता है। **समस्त श्रेष्ठ पुरुषों के द्वारा आदरणीय है।** ऐसा त्यागधर्म, उत्तम पुरुषों से आदरणीय है। आठ दिन हुए आठ, दो रहे। अकिंचन और ब्रह्मचर्य।

★ ★ ★

अपने यहाँ आया है। कहाँ आया? देखो, १९९ गाथा। अरिहन्त का ज्ञान कराते हैं। अरिहन्त का ज्ञान करने से अपनी पर्याय में अरिहन्त जैसा मिलान करने से आत्मा में सम्यग्दर्शन होता है। समझ में आया? अरिहन्त **अनन्त चतुष्टय जिसके हों, वही जिनदेव है,...** कल आया था न? अनन्त चतुष्टय और दूसरा क्या आया था? स्वचतुष्टय। दूसरा नहीं पूछो, कहते हैं। क्यों? पोपटभाई! स्वचतुष्टय में आत्मा द्रव्य जो है, वह गुण अर्थात् भाव और पर्याय अर्थात् काल। यह पर्याय और गुण का पिण्ड है, वह द्रव्य है। और क्षेत्र उसकी चौड़ाई है, काल उसकी वर्तमान प्रगट अवस्था है, भाव उसकी अनन्त गुणरूप शक्ति है। वह स्वचतुष्टय। यह स्वचतुष्टय में अनादि जीव के भाव में, भाव में -शक्ति में अनन्त चतुष्टय पड़ा है। अरिहन्त को पर्याय में अनन्त चतुष्टय प्रगट होता है। समझ में आया? स्वचतुष्टय में अरिहन्त को भाव में भी स्वचतुष्टय है और काल में भी (स्वचतुष्टय है)। क्यों? पोपटभाई! यह तो साधारण बात है।

अनन्त चतुष्टय अनन्त संसारी जीव को भाव में शक्तिरूप है। उसके पर्याय-काल में नहीं है। समझ में आया? प्रत्येक निगोद से लेकर, सब अभव्य-भव्य जीव को भाव, द्रव्य तो गुण-पर्याय का पिण्ड, भाव शक्ति, पर्याय काल, क्षेत्र चौड़ाई। उसमें प्रत्येक जीव को भाव में अनन्त चतुष्टय-अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त वीर्य ऐसा पड़ा है। समझ में आया? ऐसा अनन्त चतुष्टय का धरनेवाला द्रव्य है, ऐसी अन्तर में दृष्टि करने से और अन्तर में एकाकार करने से अरिहन्त को स्वकाल में अनन्त चतुष्टय का प्रगट होना होता है। समझ में आया? पोपटभाई!

मुमुक्षु : स्वकाल।

पूज्य गुरुदेवश्री : स्वकाल अर्थात् पर्याय। भाव में तो सबको अनन्त चतुष्टय है ही। परन्तु वह पर्याय में प्रगट नहीं तो अरिहन्त को अन्तर में अपना स्वचतुष्टयस्वरूप भगवान आत्मा एकरूप वस्तु उस पर दृष्टि करने से, उसको ध्येय बनाने से, उसका ध्यान करने से, अनन्त चतुष्टयस्वरूप ऐसा आत्मा, उसका ध्यान करने से वर्तमान काल में पर्याय में स्वचतुष्टय प्रगट जो संसार में नहीं था, वह अरिहन्त को पर्याय में प्रगट हो जाता है।

मुमुक्षु : स्वकाल।

पूज्य गुरुदेवश्री : स्वकाल हुआ। उसके वह स्वकाल हुआ। समझ में आया? वास्तविक द्रव्य का स्वकाल ही वही है। विपरीत ज्ञान और अपूर्ण ज्ञान आदि वास्तविक पूरा स्वकाल उसका नहीं। समझ में आया?

आत्मा वस्तु, उसके अन्तर में शक्ति अनन्त ज्ञान-दर्शन आदि भाव हैं। उसकी पर्याय में विपरीत ज्ञान-दर्शन आदि वह वास्तव में उसका स्वकाल नहीं। शुद्ध स्वकाल प्रगट होना, काल है उसका परन्तु शुद्ध स्वकाल का पूर्ण प्रगट होना, वह उसका स्वकाल है। तो केवलज्ञानी को अपने भाव में जो अनन्त चतुष्टय पड़ा था, उसका अन्तर में आश्रय करके, अवलम्बन करके, असाधारण ज्ञायकस्वभाव आदि का अवलम्बन करके पर्याय में अनन्त चतुष्टय प्रगट हुआ तो भाव में भी अनन्त चतुष्टय है उसको, पर्याय में भी अनन्त चतुष्टय है। उसको अरिहन्त कहते हैं। समझ में आया? यह तो अभी अरिहन्त की व्याख्या है।

मुमुक्षु : पर्याय में प्रगट जाये तब।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, तब अनन्त चतुष्टय उसकी पर्याय में आया। शक्ति की व्यक्तता हुई, सामर्थ्य की प्रगटता हुई, स्वभाव की वर्तमान पर्याय में स्फुरणा पूर्ण हुई, तब उसको स्वचतुष्टय पर्याय में है, ऐसा कहने में आया। समझ में आया? है तो पर्याय अपनी। और नीचे भी अज्ञानी को ज्ञान की पर्याय है, परन्तु है तो अपने स्वकाल की। परन्तु स्पष्ट ज्ञान की परिणति उसको नहीं कहते हैं। ज्ञान की वास्तविक परिणति तो स्व ज्ञान की परिणति हो, स्वभाव-सन्मुख होकर सम्यग्ज्ञान की धारा पर्याय में स्वसंवेदनज्ञान आना, वही स्वकाल अथवा ज्ञान की परिणति कही जाती है। समझ में आया? ऐसी ज्ञान परिणति अभव्य को कभी नहीं होती। समझ में आया? और मिथ्यादृष्टि है, तब तक भी ऐसी ज्ञान परिणति होती नहीं। और ऐसा भगवान आत्मा ज्ञानस्वरूप समुद्र, अनन्त चतुष्टय का समुद्र, उसकी अन्तर में प्रतीति ज्ञान और स्थिरता करके पर्याय में स्वकाल में वर्तमान में अनन्त चतुष्टय की व्यक्तता, प्रगटता होना, उसका नाम अरिहन्त पद कहा जाता है। आहाहा! यह तो अरिहन्तपद की व्याख्या करते हैं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : जीवनमुक्त कहो जीवनमुक्त। देहमुक्त वह विदेहमुक्त। देहमुक्त हो जाये तो विदेहमुक्त सिद्ध। विदेहमुक्त। यह जीवनमुक्त। देह का आयुष्य होते होने पर भी अन्दर पूर्ण सर्वज्ञपद हो गया, (वह) जीवनमुक्त है। समझ में आया? देह होने पर, आयुष्य होने पर भी अन्तर में पूर्ण स्वचतुष्टय प्रगट हो गया, उसको जीवनमुक्त कहते हैं। परन्तु ऐसी दशा प्रगट हो उसको। उसके लिये अरिहन्त पद की व्याख्या की। अभी अरिहन्तपद क्या है, उसकी खबर नहीं। सम्प्रदाय में हम पड़े हैं। समझ में आया?

'**जो जाणदि अरहंतं**' भगवान के आगे दर्शन क्या है? बाहर में दर्शन है या अन्दर में है? बाहर में तो स्थापना निक्षेप है। शुभभाव का निमित्त है। स्मरण आता है तो शुभभाव है। शुभभाव में लक्ष्य जाये, वह परमात्मा पर दर्शन करने को जाता है। अन्तर दर्शन चिदानन्द भगवान देहदेवल में विराजमान है। उसका दर्शन किये बिना सम्यग्दर्शन-ज्ञान होता नहीं। कहो, समझ में आया?

देखो, **वही परम मुनि अर्थात् प्रत्यक्ष ज्ञानी है।** अरिहन्त को ही महामुनि कहा जाता है। महामुनि। मुनयते इति मुनि। ज्ञान सब प्रगट हो गया। जैसा शक्तिरूप था, वैसा व्यक्तरूप। ऐसा आत्मा का स्वभाव है, ऐसी दृष्टि करने को यह बात करते हैं। समझ में आया? **क्या करता संता। उत्कृष्ट लोकालोक का प्रकाशक जो केवलज्ञान, वही जिसके परमप्रकाश है,...** भगवान अरिहन्त को, ओहो! एक समय में लोकालोक जगत की चीज़ तीन काल-तीन लोक की। **प्रकाशक जो केवलज्ञान, वही जिसके परमप्रकाश है,...** यह परमप्रकाश उसका है। सूर्य की जैसे किरण प्रकाश है, केवलज्ञान का परमप्रकाश तीन काल-तीन लोकसहित आत्मा अपनी पर्याय में देखने में आवे, इसका परमप्रकाश उसको कहा जाता है। आहाहा! ऐसी अरिहन्त की पूर्ण पर्याय की प्रगटता मेरी शक्ति में है, प्रगट करने की सामर्थ्य मुझमें है। वह बाहर से आती नहीं। ऐसा अपना द्रव्यस्वभाव की प्रतीति करना और अल्पज्ञ और राग की प्रतीति छोड़ देना, उसका नाम आत्मा का सम्यग्दर्शन—प्रतीति कहा जाता है। समझ में आया? आहाहा!

लोकालोक का प्रकाशक जो केवलज्ञान, वही जिसके परमप्रकाश है, उससे

सकल द्रव्य,... भगवान अरिहन्त का ज्ञान सकल द्रव्य। देखो, अकेला आत्मा ऐसे नहीं। अनन्त द्रव्य, अनन्त आत्मा, अनन्त परमाणु जिसके ज्ञान में आ जाते हैं। आहाहा! वस्तु है, सकल अनन्त द्रव्य है। नहीं है, ऐसा नहीं। वह सकल द्रव्य का ज्ञान अरिहन्त के केवलज्ञान की, एक जीव की एक पर्याय में आ जाता है। समझ में आया? सकल **क्षेत्र...** सकल क्षेत्र का क्या अर्थ? पूरा क्षेत्र—अन्त नहीं लोक का-अलोक का, वह भी आ जाता है ज्ञान में। क्यों? पोपटभाई! अलोक-अलोक है न खाली? अन्त बिना का। वह ज्ञान में आ जाता है। क्योंकि वहाँ अन्त हो गया न ज्ञान में आने से? नहीं हुआ?

मुमुक्षु : अमाप.... अमाप.... अमाप....

पूज्य गुरुदेवश्री : अमाप है, (लेकिन) यहाँ ज्ञान हो गया या नहीं? यहाँ ज्ञान हुआ या नहीं? अमाप का ज्ञान हुआ या नहीं? माप हो गया या नहीं? अमाप का अर्थ? अमाप तो अमाप ही है। अमाप का माप हुआ। माप का अर्थ प्रमाण हुआ। प्र-माण। प्र-विशेष, माण-माप। माप हो गया कि यह अमाप है। ऐसा केवलज्ञान—ज्ञान में क्षेत्र का अमाप का माप हो जाता है। अमाप का माप हो जाता है—अमाप का प्रमाण हो जाता है। आहाहा! समझ में आया? इतनी आत्मा की एक पर्याय की सामर्थ्य है, ऐसा बताते हैं। तेरे स्वभाव में भरा पड़ा है भगवान, उस पर नजर कर। वहाँ नजर करने का है और वहाँ आश्रय करनेयोग्य है। दूसरे कहीं आश्रय करनेयोग्य है नहीं।

सकल क्षेत्र,... ओहोहो! वह तर्क उठावे। **सकल काल,...** कोई काल बाकी रखे बिना केवलज्ञान में सकल काल ख्याल में आ जाता है। अनादि तो अनादि ख्याल में आ जाता है, अनन्त तो अनन्त ख्याल में आ जाता है। ज्ञान की एक समय की पर्याय में आ जाता है। आहाहा! केवलज्ञान किसको कहते हैं? अरिहन्त किसको (कहते हैं)? बड़ी गड़बड़ी उसमें उठी है न अभी? **भव,...** सब जीव का भव केवलज्ञान में आ गया है। भव आ गया? इस जीव का यह भव... इस जीव का यह भव... इस जीव का यह भव... इस समय यह भव, ऐसा केवलज्ञान की पर्याय में अनन्त जीव का जहाँ-जहाँ जो भव है और भव होगा और भव हो गये, सब ज्ञान में आ गया है। समझ में आया? कि जब भव करेगा, तब ज्ञान में आयेगा, केवलज्ञान में?

यहाँ तो कहते हैं कि केवलज्ञान का परमप्रकाश में सब भव आ जाता है। सकल भव। वह सकल शब्द सबमें लेना। सकल द्रव्य, सकल क्षेत्र, सकल काल और सकल भव। समझ में आया? सर्व भव। कहा था न, भव्य-अभव्य देखा, भव नहीं। बेचारा भद्रिक। खबर नहीं। भद्रिक ही कहलाये न। विचार ही किया नहीं केवलज्ञान किसको कहना? भगवान ने भव नहीं देखा है, कहे। क्योंकि भव देखे तो फिर पुरुषार्थ करने का रहता नहीं। तो इतने भव से जाना पड़े उसको। ऐसी दलील करते हैं अभी। वह तो बेचारा भद्रिक, परन्तु ऐसा भी सुना नहीं न! यह मान हो गया। क्या कहते हैं? केवलज्ञान में भव, अनन्त सर्व का अनादि-अनँन्त जो जीव का भव है, जहाँ-जहाँ भव है, वह केवलज्ञान में आ गया है।

मुमुक्षु : नोंध हो गयी है?

पूज्य गुरुदेवश्री : नोंध हो गयी है केवलज्ञान में सब भव की और मोक्ष की। यह जीव इस समय में मोक्ष जायेगा, केवलज्ञान में नोंध है। वह अपने आ गया है पहले।

मुमुक्षु : भव की हो तो मोक्ष की नहीं हो?

पूज्य गुरुदेवश्री : मोक्ष की नोंध है और भव की (नोंध है)। भव की नोंध है तो क्या हुआ? यह भव का अभाव इस समय में है, उसकी नोंध नहीं हुई? भारी गड़बड़ अभी चली है। एक कहे कि नहीं, कल मोक्ष जाये, ऐसा नहीं। भविष्य में कोई ऐसा कहे यह कौनसा काल कहलाये? हुण्डावसर्पिणी। हुण्डावसर्पिणी भविष्य में आयेगा, उसमें पहला तीर्थंकर कौन होगा? ऐसा क्या शास्त्र में है? ऐसा प्रश्न करते हैं।

मुमुक्षु : उसमें नाम लिखा है?

पूज्य गुरुदेवश्री : नाम का क्या काम है? जानते नहीं है?

मुमुक्षु : परन्तु नाम होगा न।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु नाम कितने लिखे? एक निगोद में यह कीड़ी का जीव, यह निगोद में गया लाओ नाम शास्त्र में। इतना शास्त्र में लाओ एक नाम कि यह कीड़ी मरकर यहाँ निगोद में गयी। नाम कितना दे? सिद्धान्त कह दिया। समझ में आया? कि कीड़ी मरकर निगोद में जाती है, निगोद से निकलकर कीड़ी में आता है। सिद्धान्त कह

दिया। फिर नाम ... दे कि यह जीव, यह राजा मरकर निगोद में गया। काम क्या है तेरे? सिद्धान्त कहते हैं कि मनुष्य भी निगोद में जाते हैं, कीड़ी भी निगोद में जाती है। निगोद समझे? यह काई, आलू-बटाटा, शक्करकन्द, उसमें से निकलकर राजा होता है और राजा मरकर वहाँ जाते हैं। सिद्धान्त कह दिया। फिर नाम ... अनन्त नाम देते हैं? यह राजा मरकर यहाँ निगोद में गया, यह कीड़ी मरकर यहाँ गयी। नाम कितना कहे? लम्बी स्तुति कितनी करे? सिद्धान्त कह दिया। चार पैसा का सेर तो मण का ढाई रुपया।

मुमुक्षु : चाबी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : चाबी है। उसमें पौने अड़तीस सेर का क्या आया उसमें? आ गया, सुनने। उसमें लिखा नहीं है? वह तुम्हारे क्या कहते हैं? चाबी कहते हैं गुर। गुर। चार पैसे का सेर मण के ढाई। मण का ढाई होता है न? तो एक कुंची दे दी। हमारे यहाँ कुंची कहते है, उसको। तो अब इसमें सवा पंचावन सेर का कितना वह लिखा नहीं है। परन्तु आ गया। सवा पंचावन का कितना? कि सवा पंचावन आना।

मुमुक्षु : .... तो मिला ले।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु उसमें आ गया है। चन्दुभाई! परन्तु ऐसा बडथोल जैसा निकला है न कितना। उसमें नाम नहीं है। तो वह कहे कि उसमें नौ प्रतिशत के कितने पैसे आये नहीं हो उसमें। चार पैसे सेर तो मण का ढाई। नव टांक समझे न? नव टांक कहते हैं न? छठांग, छठांग का उसमें नहीं आया। आया, सुन तो सही। चार पैसे सेर तो पैसा का पाव सेर। और आधे पैसे का नव टांक, छटांक जो तुम्हारे कहते हैं। दृष्टान्त कितना देना? चाबी दे दी। चौबीस दण्डक में मनुष्य मरकर चौबीस में चले जाते हैं। देव मरकर देव नहीं होता, देव मरकर नरकी नहीं होता, नारकी मरकर नारकी नहीं होता, नारकी मरकर देव नहीं होता। बाकी सब सबमें जाते हैं। सिद्धान्त दे दिया। अब नाम कितना दे शास्त्रकार? उन्होंने नाम नहीं कहा शास्त्र में, इसलिए केवली ने देखा नहीं। केवली ने देखा नहीं। आहाहा! नाम कहाँ से परन्तु कितना नाम दे?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : अनन्ता अनन्त और अनन्ता अनन्त भव का कितना नाम दे

उसको ? चाबी दे दिया। चाबी कहा न ? क्या कहते हैं ?

मुमुक्षु : पहचान कैसे करेंगे ?

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या कहते हैं, समझ में नहीं आया।

मुमुक्षु : नाम नहीं दिया तो पहचान कैसे करे ?

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु नाम का क्या काम है यहाँ ? नाम का किसको काम है ? नाम का काम है ? वह तो यह जीव मरकर यहाँ जाता है, ऐसा शास्त्र में केवलज्ञान कह दिया।

मुमुक्षु : नाम....

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु कितना दे ? संख्यात वर्ष। उसमें भाषा संख्याती। तो अनन्त भाषा नहीं, असंख्य भाषा नहीं तो कहाँ से आवे ? अभी असंख्य भाषा स्वर्ग के लोक के असंख्य भाषा हो, पल्योपम और सागरोपम। समझ में आया ? असंख्य भाषा, असंख्य वर्ष है न ? केवली को तो थोड़ा ही वर्ष है। महावीर भगवान को (अरिहन्तदशा में) ३० वर्ष रहा केवलज्ञान। अब ३० वर्ष में कितना शब्द निकाले ?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु किसके नाम कितने कहे ? यह आत्मा ऐसे मरकर जाता है। सिद्धान्त कह दिया। नाम कितना ? क्या अनन्त नाम दे शास्त्र में ? तो शास्त्र अनन्त लिखा जाता है ? अनन्त बोला जाता है ? अनन्त कहा जाता है ? अनन्त काल है ? वस्तु का एक न्याय-नियम दे दिया।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु कितना है ? जितनी बात समझने की सामर्थ्य नहीं तो वह अनन्त कहाँ से कहा जाता है। आ गया सब। एक जीव मरकर कहाँ जाता है, ऐसा सब उसके ज्ञान में आ गया है। कथन कितना करे ? वाणी कितनी है ? वाणी कितने बोले ? एक जीव का अनन्त गुण है, एक शब्द से एक गुण कहे तो अनन्त काल, अनन्त काल तीन काल हो तो भी अनन्त गुण एक-एक समय में एक गुण कहे तो पार नहीं

आता है। क्योंकि तीन काल करते आकाश के प्रदेश अनन्त गुण के और उससे एक जीव का गुण अनन्त गुणा है। समझ में आया? खबर कहाँ है क्या चीज़ है?

तीन काल का समय... समय किसको कहते हैं? आँख बन्द करके उघाड़े उसमें असंख्य चला जाता है। एक समय में एक गुण आत्मा का कहे, एक गुण, तो तीन काल के समय में आत्मा में जितने गुण हैं, उसे अनन्तवें भाग कह सकते हैं। क्योंकि तीन काल से अनन्त गुणा गुण आत्मा में है। आहाहा!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : कौन कह सके? एक समय में तो... अनन्तगुण है, ऐसा बस। जीव में अनन्त गुण है, यह बात कह दी। समझ लेना इतने में तू। संख्या सबकी गिनता है ऐसी? घर में भी पाँच करोड़ है तो एक-एक गिनते हैं? एक पाई, दो पाई, तीन पाई, चार पाई, पाँच पाई, ऐसे करते-करते करोड़ गिनता होगा? ऐई! सेठ! यह एक पाई, यह दो पाई, यह तीन पाई, यह चार पाई, यह पाँच पाई, ऐसे करते-करते करोड़ की गिनती करता होगा? ऐई..! शोभालालभाई! यह सेठिया को पूछो इनको भाई!

मुमुक्षु : अज्ञानी कैसे समझे?

पूज्य गुरुदेवश्री : किसकी बात चलती है? अज्ञानी को समझाने की बात चलती है। शब्द कैसे आवे? अज्ञानी को समझना हो तो शब्द अनन्त आते हैं कभी? अनन्त आत्मा है। सब, समझ लिया। एक आत्मा में अनन्तानन्त गुण है, बस इतना। क्या अक्षर से अक्षर कहे? भाषा केवली क्या, तीन काल में कोई कह सके नहीं। प्रश्न करते हैं, समझते नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : .... परन्तु कोई कह सके नहीं तीन काल में। केवली का आयुष्य भी छोटा है। आठ वर्ष में केवल (ज्ञान) हो तो देह से अनन्त करोड़ पूर्व तो संख्यात वर्ष है और द्रव्य तो अनन्त है। एक-एक गुण उससे अनन्त गुना हैं। द्रव्य से गुण अनन्त गुणा है। जितना द्रव्य है, उससे अनन्त गुणा गुण है एक द्रव्य में। आहाहा! यह तो इशारे में समझ जाता है कि हाँ, अनन्त कहते हैं, अन्त बिना का गुण है, बस

इतना। इतना न समझे तो समझने की सामर्थ्य कहाँ आयी उसमें? समझ में आया?

सर्व भव का भगवान जानते हैं। सकल तीन काल-तीन लोक का अनन्त जीव का भव भगवान के ज्ञान में आ गया है। कोई भव बाकी नहीं। और सर्व भाव। भाव में आ गया या नहीं? काल में पर्याय सबकी जानते हैं, भाव में सबका गुण भी जानते हैं। तीन काल-तीन लोक के सब भाव भगवान के ज्ञान में आ गये। ओहोहो! कोई कभी समझे नहीं, विचार नहीं करे।

मुमुक्षु : यह मानने से क्रमबद्ध हो जाता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : क्रमबद्ध होता है तो भले रहा। तुझे क्या दिक्कत है?

मुमुक्षु : तो अनेकान्त ....

पूज्य गुरुदेवश्री : क्रमबद्ध भी है और अक्रम भी है। पर की अपेक्षा से अक्रम कहा जाता है। अक्रम (अर्थात्) पर्याय नहीं है आगे-पीछे। आगे-पीछे क्या कहते हैं? आगे-पीछे नहीं होती है। वह तो एक साथ में चलती है एक धारा।

मुमुक्षु : अनिश्चित्।

पूज्य गुरुदेवश्री : अनिश्चित-फनिश्चित है नहीं। समझ में आया? सब निश्चित ज्ञान में आ गया है। सब निश्चित है। तुम निश्चित करो तो तेरी दृष्टि स्वभाव पर जायेगी। समझ में आया? दूसरा कोई उसका उपाय है नहीं। कभी भी दरकार की ही नहीं। ग्यारह अंग पढ़ डाला, नौ पूर्व पढ़ डाला, परन्तु यह आत्मा के लिये बात करते हैं। यह शास्त्रकार आत्मा का हित करने के लिये हितोपदेशक है। तो हित करने की बात करते हैं। स्वभाव-सन्मुख जाने की बात करते हैं। उस बात की दरकार कभी की नहीं। समझ में आया? आहाहा!

जानता हुआ परमप्रकाशक है। देखो, **सकल द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव को जानता हुआ परमप्रकाशक है।** भगवान! ऐसी प्रतीति हो जाये, तब कुदेव-कुगुरु-कुशास्त्र की श्रद्धा निकल जाये। और एक आत्मा कहते हैं कोई उसकी श्रद्धा निकल जाये, और एक आत्मा में एक ही गुण है, ऐसा कहनेवाले की श्रद्धा निकल जाये,

अकेली जड़ है, यह कहनेवाले की श्रद्धा निकल जाये। एक आत्मा में अनन्त गुण हैं, अनन्त अनन्त गुण हैं ऐसे मैं जान सकता हूँ, अपनी पर्याय से। कार्य पर्याय में होता है तो पर्याय से द्रव्य में लक्ष्य करने से अनन्त गुणा गुण आत्मा में है, ऐसे पर्याय का ज्ञान में आ जाता है। केवली को आ जाता है, ऐसे सम्यग्ज्ञानी को भी ज्ञान में आ जाता है। अनन्त गुण और अनन्त द्रव्य ज्ञान में आ जाते हैं। समझ में आया? आहाहा! वास्तविक तत्त्व और उसकी महत्ता और उसका माहात्म्य कभी सुना नहीं, सुना नहीं। आहाहा!

देखो, **ये केवलज्ञानादि... अनन्तभावों को जानते हैं, इसलिए अनन्त हैं,...** देखो, अनन्त भावों को जानते हैं, इसलिए अनन्त है, ऐसा। वह इसलिए **अनन्त हैं, अविनश्वर हैं, इनका अन्त नहीं है, ऐसा जानना।** भगवान के ज्ञान में अन्त कहाँ? पूर्णानन्द प्रगट हो गया (वह) अनन्त है। नाशवान वह पर्याय तो नाश (होती) है। ऐसी की ऐसी पर्याय सदाकाल रहेगी। ऐसे अरिहन्त एक जीव की पर्याय इतनी सामर्थ्यवाली प्रगट, ऐसे जिसको प्रतीति में आता है, उसको आत्मा की प्रतीति हो जाती है। आत्मा इतनी पर्याय की सामर्थ्य रखता है कि सर्व को जाने, तो वह (सामर्थ्य) मेरी पर्याय में तो है ही नहीं। तो वह भी आत्मा है और मैं भी आत्मा हूँ, तो मेरी पर्याय में इतना सामर्थ्य क्यों नहीं? कि इतनी सामर्थ्य किसमें है? कि मेरे ज्ञानगुण में अन्दर में है। सब द्रव्य, सर्व क्षेत्र, सर्व काल, सर्व भव, सर्व भाव को जानने की सामर्थ्य मेरे गुण में है। गुण पर दृष्टि देने से अर्थात् गुण पर दृष्टि देने से द्रव्य पर दृष्टि हुई। द्रव्य पर दृष्टि देने से पर्याय में सम्यग्दर्शन में अनन्त गुण मेरे में है, ऐसी प्रतीति हो गयी। उसमें स्थिर होने से चारित्र होगा और स्थिर होने से चारित्र होकर मेरा केवलज्ञान होगा, ऐसी प्रतीति आत्मा में आ जाती है। समझ में आया? भाई! यह बात कहीं बात की बात नहीं। अन्तर ज्ञान की क्रिया में करना, ऐसी बात है। समझ में आया? ओहोहो!

★ ★ ★

गाथा - २००

आगे जिनदेव के ही अनेक नाम हैं, ऐसा निश्चय करते हैं — क्या बताते हैं? कोई कहे, भैया! उसको ब्रह्मा, विष्णु और दूसरा कहता है, ऐसा है? कि नहीं। यह जिनदेव को ही उसका नाम कहा जाता है। दूसरा ब्रह्मा जगत का कर्ता और विष्णु व्यापक, वह नहीं। अरिहन्त की पर्याय प्रगट हुई, उसको सब नाम यथार्थ में लागू पड़ते है। दूसरे को लागू होता नहीं। यह बात २०० गाथा में कहते हैं।

३३१) जो परमप्पउ परम-पउ हरि हरु बंभु वि बुद्धु।
परम पयासु भणंति मुणि सो जिण-देउ विसुद्धु॥२००॥

जिस परमात्मा को... जिस परमात्मा अरिहन्त की पर्याय को, **मुनि परमपद हरि महादेव ब्रह्मा बुद्ध और परमप्रकाश नाम से कहते हैं,...** महामुनि, केवली को ही बुद्ध, परमात्मा विष्णु आदि कहते हैं। दूसरा कोई ब्रह्मा, विष्णु है, ऐसा है नहीं। समझ में आया? ऐई! रतिभाई! **वह रागादिरहित शुद्ध जिनदेव ही है, उसी के ये सब नाम हैं।** देखो, रागादि विकल्परहित निर्विकल्प केवलज्ञानादि पर्याय की प्रगट जो दशा हुई, उसको सब नाम (दिये जाते हैं)। हरि, बुद्ध, परमेश्वर जो नाम कहो, वह उसका नाम है। १००८ नाम आदि पुराण में... समझे? क्या? जिनसेन आचार्य। यह जिनसेन आचार्य। १००८ नाम से बुलाते हैं भगवान को। परन्तु इस पद को हों, ऐसा अरिहन्त पद को। दूसरा कोई ब्रह्मा, विष्णु और महेश और हरिहर, ऐसा है ही नहीं। ऐसे पद को सब शब्द लागू होते हैं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : बुद्ध। बुद्ध अर्थात् ज्ञानी।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, वह नहीं, वह नहीं। वह बात नहीं। कहते हैं न। बुद्ध, यह केवली को बुद्ध कहते हैं। वह बुद्ध नहीं। वह तो नामधारी, यह भावधारी। यह बुद्ध आत्मा है। अरिहन्त की पर्याय प्रगट हुई, उसको ही बुद्ध कहते हैं। वह बुद्ध-बुद्ध है ही

नहीं, वह तो अज्ञानी था। समझ में आया? वह तो अज्ञानी था। वह तो क्षणिकवाद मानता था। वैराग्य था इतनी (बात) थी। असली तत्त्वदृष्टि का बिल्कुल भान नहीं था। गृहीत मिथ्यादृष्टि था बौद्ध। समझ में आया?

मुमुक्षु : वैराग्य भी नहीं....

पूज्य गुरुदेवश्री : वैराग्य भी किसका? यथार्थ वैराग्य भी किसको कहते हैं? पुण्य-पाप के विकल्प से रहित महान अस्तित्व की प्रतीति करे तो वैराग्य कहा जाता है। महान पदार्थ एक-एक भगवान पूर्णानन्द अनन्त गुण का भण्डार। राग, पुण्य-पाप का विकल्प एक समान है, उससे हटकर पूर्णानन्द की प्रतीति करे तो प्रतीतिसहित को वैरागी कहा जाता है। दूसरे को यथार्थ वैराग्य भी नहीं। वह तो वैरागी है। जरा बात (ऐसी है)। वह तो बाहर में पुण्य प्रकृतिवाला राजा था और लोग क्षणिकवाद में चढ़ गये। ऐसा चला गया। वस्तु अत्यन्त झूठ है। समझ में आया? सम्यग्दर्शन नहीं था, मिथ्यादृष्टि था वह तो। यहाँ तो भगवान को बुद्ध कहते हैं। क्या भगवान? यह अरिहन्त कहा। अनन्त चतुष्टय प्रगट हुआ। द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भाव ज्ञान में आया। ऐसी अरिहन्त पदवी को बुद्ध कहा जाता है। उस बुद्ध को बुद्ध कहते हैं, ऐसा नहीं। वह बुद्ध तो अबुध था।

मुमुक्षु : .... तो भगवान कहते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, वह तो भगवान कहते हैं। वह नहीं यह। इस भगवान को बुद्ध कहते हैं, इस भगवान को बुद्ध कहते हैं। ऐसी पर्याय प्रगट हो, उसको बुद्ध कहते हैं। आहाहा! भारी गड़बड़ जगत में, भाई!

मुमुक्षु : ऐसे नाम आवे इतने फिर...

पूज्य गुरुदेवश्री : नाम आवे, परन्तु कहाँ से? नाम का अर्थ क्या? कि पहले तो कह दिया कि अनन्त चतुष्टय जो शक्तिरूप था, एक जीव में, (वह) पर्याय में प्रगट हो गया, उसको यहाँ अरिहन्त, सिद्ध, बुद्ध आदि कहा जाता है। ऐसी बात है। समझ में आया?

भावार्थ :- कहते हैं, देखो। **प्रत्यक्षज्ञानी उसे परमानन्द ज्ञानादि गुणों का आधार होने से परमपद कहते हैं।** देखो, भाषा पहली। उसको परमपद कहते हैं, परमपद।

किसको ? अरिहन्त को। अरिहन्त की पर्याय जिसको प्रगट हुई, उसको महामुनि परमपद कहते हैं। क्योंकि परमपद अर्थात् जो स्वभाव में पूर्ण पद था, वह व्यक्तरूप पूरी पर्याय हो गयी, उसमें रहनेवाला अरिहन्त इसलिए, उसको परमपद कहते हैं। समझ में आया ? आहाहा! देखो, भाषा क्या है देखो, **प्रत्यक्षज्ञानी....** केवलज्ञानी **उसे...** उसे अर्थात् ? **परमानन्द ज्ञानादि गुणों का आधार होने से...** कौन ? केवलज्ञानी। केवलज्ञानी भगवान पर्याय में अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द सब प्रगट हो गया। ऐसी पर्याय का गुण का आधार द्रव्य है तो उसका आधार होने से उसके आत्मा को परमपद कहा जाता है। परमपद कोई दूसरी चीज़ नहीं, भगवान अरिहन्त को छोड़कर। समझ में आया ?

प्रत्यक्षज्ञानी... केवलज्ञानी, त्रिकाल ज्ञानी भगवान, सन्त उसे **परमानन्द ज्ञानादि गुणों का आधार...** परम आनन्द, परम ज्ञान, परम दर्शन, परम वीर्य, परम स्वच्छता, परम प्रभुता इत्यादि अनन्त गुण की पर्याय का आधार यह द्रव्य है। उस कारण से भगवान परमेश्वर अरिहन्त को ही परमपद कहते हैं। दूसरे को परमपद कहते नहीं। कोई कहे कि वैकुंठ में कोई दूसरा होगा, परमेश्वर होगा, उसके पास जाना है। वह कुछ है नहीं। सब गप्प गप्प मारी है। समझ में आया ?

मुमुक्षु : अनेकान्त की परिभाषा में तो ....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, अनेकान्त वह झूठ अनेकान्त है। यह बात सच्ची है, कहते हैं ऐसा। मिथ्या अनेकान्त है। ऐसा होवे ? उसमें धर्म हो उसका नाम अस्ति और पर से नहीं, उसका नाम नास्ति। नहीं है, उसका कहाँ से आया ? अनेकान्त कहे। सब भगवान है, सब भगवान लगा दो। कहते हैं वह ईशु, महावीर, गाँधी सब समान थे। ऐसा उपदेश करते हैं तुम्हारे। यह तो सेठ के घर में डाले ऐसा। तुम्हारे रजनीश ऐसा कहता है। कहाँ तुमको भी भान है।

... कहा था वहाँ। वह क्या तुम्हारे ? वह पुस्तक लेकर नहीं आया था ? कोई आया था। सफेद दाढ़ीवाला। वह रजनीश की पुस्तक लेकर आया था। वहाँ आया था मल्हारगढ़ नहीं ? देखा था ? एक आया था। मेरे पास आया था पुस्तक (लेकर)। कहा यह पुस्तक झूठी है। एक आया था। भाई ! शोभालालभाई ! नहीं तुम्हारे खबर हो। एक रूपवान था रूपवान। कुछ नाम था। भोजन करते थे न। साथ में बैठे थे। ऐसे मनुष्य

नरम था। नरम था। बैठे थे। भोजन के समय बैठे थे। वह रूपवान था और दाढ़ी थी। पुस्तक लेकर आया। पढ़ो आप। कहा, हम ऐसा कूड़ा नहीं वाँचते। शोभालाल! यहाँ तो भाई हमारे स्पष्ट बात। यहाँ मक्खन नहीं है। ऐसे कूड़े की बात हम नहीं वाँचते कहा। डालचन्दजी पैसा देते हैं। कोई पुस्तक कोई ऐसे हो न पहले देते थे। ऐसा कहते थे सही। पाँच हजार, दस हजार बनाओ। पैसेवाले व्यक्ति जाओ। जहर में पड़ता है या अमृत में कहाँ खबर है, उसको। ऐई! सेठ! पहिचान करनी पड़ेगी। छोटे सेठ को उत्साह है। यह मार्ग ऐसा एक ही है, दूसरा कोई मार्ग है ही नहीं। दूसरा कोई कहे तो तीन काल में सुननेयोग्य है नहीं। समझ में आया? आहाहा!

देखो न, **प्रत्यक्षज्ञानी उसे परमानन्द ज्ञानादि गुणों का आधार होने से परमपद कहते हैं।** दूसरा कोई परमपद है नहीं। एक ही आत्मा अपनी पूर्ण पर्याय का प्रगट करनेवाला अरिहन्त भगवान, जीवनमुक्त दशा, वही एक परमपद है। एक आत्मा। दूसरा कोई परमपद कहे, ऐसा है ही नहीं। समझ में आया? तत्त्व की खबर बिना कहाँ पोषण होता है, उसकी खबर नहीं पड़ती। सेठ! बराबर है या नहीं? खबर न पड़े। तारणस्वामी भी बहुत कहते हैं। अपने बहुत गाथा निकाली थी। सर्वज्ञ भगवान ने देखा ऐसा एक मार्ग सच्चा है। सर्वज्ञ से दूसरा कहते हैं, वह सब बात झूठी है। गाथायें बतायी थीं, उस कारण से बतायी थीं।

सर्वज्ञ परमात्मा जिसको एक समय में तीन काल-तीन लोक का ज्ञान (हुआ), एक व्यक्ति को, हों! उस व्यक्ति ने जो कही तीन काल-तीन लोक की बात, अनन्त द्रव्य आदि उसकी बात एक सत्य है, बाकी किसी की बात सत्य है नहीं। वह तारणस्वामी में बहुत गाथा आती हैं। गाथा बतायी थी, गाथा बतायी थी। सब व्याख्यान में आ गयी है।

मुमुक्षु : उसको छिपाना चोरी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : चोरी है। हाँ, वही आयी थी बात। सर्वज्ञ की बात छुपाना, वह चोर है। ऐसा कहते हैं। तारणस्वामी हों। ... यथार्थ है। वहाँ तो निगोद में गच्छई, ऐसा कहते हैं बारम्बार। तत्त्व सर्वज्ञ परमात्मा ने अनन्त आत्मा, अनन्त गुण, अनन्त पर्याय जैसा देखा, उसको तुम ढाँक देते हैं, चोर है। चला जायेगा निगोद में। समझ में आया? वह तो बराबर है, वीर्य का जोर है।

यहाँ कहते हैं... परन्तु ज्ञान न मिले और वाडा में पड़े। जय भगवान! फिर खबर नहीं मिले कुछ। ऐसे न चले। वीतराग मार्ग की पहिचान करनी चाहिए। तीन लोक का नाथ सर्वज्ञदेव परमेश्वर विराजमान है। अनन्त हो गया, अनन्त होगा, संख्यात विराजते हैं। अनन्त सिद्ध विराजते हैं, सब केवलज्ञानी। इसके बाद सिद्ध की बात लेंगे। सिद्ध भी सर्वदर्शी त्रिकाल स्वभाव को जानते हैं। अरिहन्त जानते हैं, सिद्ध हो गया फिर चला गया ज्ञान, ऐसा नहीं। वह सब बात बाद में कहेंगे।

कहते हैं कि **वही विष्णु है,...** कौन? जो आत्मा में अनन्त गुण कहा अनन्त चतुष्टय, उसकी पर्याय में ध्यान करके प्रगट किया, वही विष्णु है। विष्णु दूसरा कोई नहीं कि जगत का कर्ता बनानेवाला-फनानेवाला कोई विष्णु है नहीं। विष्णु का अर्थ क्या? व्यापक। **सबमें व्यापक ऐसा जिनदेव देवाधिदेव परमात्मा अनेक नामों से गाया जाता है।** क्योंकि सब ज्ञान हो गया न उसमें? केवलज्ञान में लोकालोक का ज्ञान हो गया तो उस अपेक्षा से व्यापक कहने में आया। व्यापक। ज्ञान में तीन काल-तीन लोक देखने में आये, भगवान का ज्ञान उस अपेक्षा से व्यापक कहा गया है। ज्ञानी कहीं लोकालोक में चला नहीं जाता। समझ में आया? आहाहा! नाम से ठग जाते हैं लोग।

मुमुक्षु : विनय विष्णु कहे।

पूज्य गुरुदेवश्री : विनय विष्णु कहे। नारायण? नारायण कहते हैं नारायण। जीव नारायण हो गया लो, धूल। यहाँ तो भगवान आत्मा शक्ति में नारायणरूप है, परमात्मरूप है, परमेश्वररूप है, अरिहन्तपदरूप है, सिद्धपदरूप है अन्दर स्वभाव में। उसकी अन्तर में दृष्टि और ध्यान करने से पर्याय में प्रगट हुआ, उसको ही विष्णु कहा जाता है। दूसरा कोई विष्णु-बिष्णु है नहीं। समझ में आया?

वही महादेव है,... यह शंकर कहते हैं न? वह नहीं। यह महादेव। महादेव, देवाधिदेव। पर्याय में—एक समय की पर्याय में पूर्णानन्द की पर्यायसहित सब गुण प्रगट हो गया, उसको ही महादेव, दिव्यशक्ति प्रगट हुई तो महादेव (कहते हैं)। दूसरे को महादेव कहते नहीं। समझ में आया? ऐई! रतिभाई! तुम्हारे है न बाजार में कुछ? क्या है? हनुमान? कौन है एक? अम्बाजी का मन्दिर है एक, नया गाँव में बीच में।

उसी का नाम परमब्रह्म है,... परमब्रह्म परम आनन्दरूप, वह अरिहन्त भगवान जिनेश्वरदेव। अपनी पर्याय में पूर्ण प्राप्ति की, वही परमब्रह्म, परम आनन्द का अनुभव करनेवाला, पर्याय में परमब्रह्म आया, उसी आत्मा को परमब्रह्म कहते हैं। दूसरा कोई परमब्रह्म व्यापक है या दूसरा ऐसा है ही नहीं। वस्तु में ऐसी चीज़ है ही नहीं दूसरी।

सबका ज्ञायक होने से बुद्ध है,... देखो, भगवान अरिहन्त को ही बुद्ध कहते हैं। वह बुद्ध तो अज्ञानी था। यहाँ तो दो को दो चार जैसी बात है, भाई! गड़बड़-गड़बड़ कुछ न चले। समझ में आया? **बुद्ध है,...** वह तो एक समकालीन था समकालीन। बाकी वह दृष्टि भिन्न, यह दृष्टि भिन्न। वह सर्वज्ञ भगवान महावीर थे। यह तो उसके वैराग्य बाहर का कृत्रिम या क्षणिक दृष्टि हो गयी। अकेला क्षणिक पर गया और वैराग्य (हुआ) इसलिए क्षणिक दृष्टि हो गयी। वस्तु दृष्टि मिथ्यात्व। समझ में आया? वह तो श्रीमद् ने लिखा है। श्रीमद् राजचन्द्र उनकी पुस्तक में। 'बौद्ध की दृष्टि से देखो तो वह बौद्ध मोक्ष को पाया नहीं है। उसकी दृष्टि में विपरीतता है। २७ प्रश्न गाँधीजी ने पूछे थे। २७। उसमें उत्तर दिया है। समझ में आया? वह माने सबको न गाँधीजी कि ऐसा होगा और वैसा होगा। नहीं। समझ में आया? यहाँ तो तैयार है सब। ... भव है न।

देखो, देखो पृष्ठ निकला। 'बुद्ध भी मोक्ष नहीं पाया, वह किस कारण से आप कहते हो?' गाँधीजी ने प्रश्न किया था। गाँधीजी ने श्रीमद् को प्रश्न किया था कि बुद्ध भी मोक्ष नहीं पाये, वह किस पर से आप कहते हो? यह प्रश्न २०वाँ है। २७ प्रश्न हैं। २७ वर्ष में। उनका २७वाँ वर्ष चलता था श्रीमद् का, तब २७ प्रश्न गाँधीजी ने उनको पूछे थे। तो कहते हैं 'उनका शास्त्र, सिद्धान्तों के आश्रय से।' बौद्ध मोक्ष नहीं पाये, (ऐसा) क्यों कहते हो आप? पूछा गाँधीजी ने। हम कहते हैं, उसके शास्त्र सिद्धान्तों के आश्रय से, बुद्ध के शास्त्र के आधार से। 'जो प्रमाण उनके शास्त्र सिद्धान्त हैं, वे प्रमाण जो उनके अभिप्राय हो तो वह अभिप्राय पूर्वापर विरोध भी दिखता है।' पूर्वापर विरोध भी दिखता है। समझ में आया? यह देखो, श्रीमद् २७ वर्ष की उम्र में (लिखते हैं)। 'और वह लक्षण सम्पूर्ण ज्ञान का नहीं।' पूर्वापर विरोध वह सम्पूर्ण ज्ञान का लक्षण नहीं। सम्पूर्ण ज्ञान जहाँ न हो, वहाँ सम्पूर्ण राग-द्वेष नाश पाना सम्भवति नहीं। जहाँ सम्पूर्ण ज्ञान नहीं, वहाँ सम्पूर्ण राग-द्वेष नाश होने के योग्य नहीं।

'जहाँ तू वैसा हो वहाँ संसार का सम्भव है।' देखो, उतरता जाता है ऐसे। पहले ऐसा कहा, उसके शास्त्र के आधार से और यह अभिप्राय उसके पूर्वापर विरोध दिखाता है। लक्षण सम्पूर्ण ज्ञान का उसमें न हो, विरुद्ध पूर्वापर हो, वह सम्पूर्ण ज्ञान का लक्षण न हो। सम्पूर्ण ज्ञान न हो, वहाँ सम्पूर्ण राग-द्वेष नाश पाना सम्भवित नहीं। जहाँ उनके... समझे न? 'जहाँ वैसा हो वहाँ संसार का सम्भव है। सम्पूर्ण राग-द्वेष नाश नहीं, वहाँ संसार सम्भव है। इसलिए केवल मोक्ष उसे हो, ऐसा कहना बन सके, ऐसा नहीं। और उसके कहे शास्त्र में जो अभिप्राय है, वह अतिरिक्त दूसरा उनका अभिप्राय था, वह दूसरे प्रकार से जानना, तुमको कठिन पड़े ऐसा है। कठिन पड़े ऐसा है। क्योंकि शास्त्र में उन्होंने कहा, तत्प्रमाण अपने मानना, उसका आशय। दूसरा और आशय कहाँ से निकालना? 'तथापि तुम कहो बुद्ध का अभिप्राय दूसरे उस कारणपूर्वक कहने से प्रमाणभूत न हो, ऐसा कहीं नहीं।' दूसरा अभिप्राय जो दूसरा तुम कहो। शास्त्र सिद्धान्त के अतिरिक्त विचारिये, परन्तु उसके अतिरिक्त दूसरा अभिप्राय उसका है नहीं। समझ में आया? २७वाँ वर्ष और २० वाँ प्रश्न।

मुमुक्षु : क्षणिकवाद।

पूज्य गुरुदेवश्री : क्षणिकवाद माने। वह पर्याय को ही सारा आत्मा माने। एक क्षणिक को ही पूरा आत्मा माने। पूरे अस्तित्व की दृष्टि हुई नहीं। त्रिकाल द्रव्य है, उसकी दृष्टि नहीं हुई। वेदान्त ने अकेला आत्मा माना कूटस्थ, इसने एक क्षणिक माना। यहाँ तो त्रिकाल ध्रुव भी है और क्षणिक-क्षणिक परिणमन भी है। ऐसी सारी वस्तु होकर पूरा है। एकान्त माननेवाला वस्तु को समझता नहीं। समझ में आया?

सबमें व्यापक ऐसा जिनदेव देवाधिदेव परमात्मा अनेक नामों से गाया जाता है। समस्त रागादिक दोष के न होने से निर्मल है,... अरिहन्त भगवान को बिल्कुल रागादि है नहीं, बिल्कुल इच्छा नहीं है। वाणी बोलते हैं—आती है तो इच्छा नहीं है। इच्छापूर्वक वाणी भगवान की नहीं है। भगवान बोलते हैं न? कौन बोलते हैं? वह तो वाणी निकलती है इच्छा बिना। आहाहा! गजब बात, भाई! वह तो वीतराग पिण्ड हो गया, उसमें इच्छा कहाँ है? वाणी परमाणु की पर्याय, वाणी सहज निकलती है। **ऐसा जो अरहन्तदेव, वही परमात्म परमपद,...** बात पहले से ली। **परमपद, वही विष्णु, वही**

ईश्वर,... वह ईश्वर। सम्पूर्ण शक्ति प्रगट हो गयी, उसका नाम ईश्वर। दूसरा कोई ईश्वर-बिश्वर कर्ता है नहीं।

वही ब्रह्म,... आनन्द। **वही शिव...** अर्थात् महादेव, **वही सुगत...** अर्थात् बुद्ध, **वही जिनेश्वर और वही विशुद्ध—इत्यादि एक हजार आठ नामों से गाया जाता है।** लो! समझ में आया? परन्तु यह अरिहन्त कहा, ऐसा हो तो। द्रव्य पूरा, गुण पूरा और पर्याय में पूरी प्रगट दशा हो गयी। तीनों में जहाँ पूर्णता हो गयी। द्रव्य पूरा तो है ही, गुण पूरा तो है ही, पर्याय में पूरा जहाँ हुआ, पूर्ण परमात्मा, पूर्ण ईश्वर, पूर्ण ब्रह्म जो कहो, वह है। ऐसा द्रव्य-गुण-पर्याय सर्वज्ञ के अतिरिक्त तीन काल में दूसरे में होता नहीं। समझ में आया? यह तो खबर बिना जहाँ-तहाँ सिर फोड़े। क्यों? रतिभाई! ऐई! मनसुखभाई!

मुमुक्षु : .... समन्वय करो।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह समन्वय किया न। उसकी पर्याय में लागू पड़े, वह उसका कहना। दूसरे के साथ क्या सम्बन्ध है यहाँ? वह नामवाला है, उसे गुण ऐसे हों आत्मा अरिहन्त के, उसे वह लागू पड़े। जो नामवाले को लागू पड़ते नहीं। लागू होता नहीं है। समझ में आया?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : १००८ यह कितने बोल सके? १००८ लिये हैं नाम जिनसेन आचार्य ने आदिपुराण में। ऐसे पाँच जनों ने लिये हैं। एक हेमचन्द्राचार्य ने लिया है श्वेताम्बर में। एक दूसरा अपने बनारसीदास ने लिया है १००८, एक दूसरा लिया है दूसरा। ऐसे पाँच आते हैं। पुस्तक आती है, पुस्तक आती है। पाँच १००८-१००८ ऐसे पाँच। अपने पुस्तक है यहाँ। पुस्तक है। सब देखा है। सब वाँचा है सबका नाम।

मुमुक्षु : विष्णु सहस्त्रनाम।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह विष्णु सहस्त्रनाम यहाँ से उठाकर उसने बनाया। ये जो अरिहन्त का नाम थे, वह विष्णु सहस्त्रनाम उसने बनाया।

नाना रुचि के धारक... नाना अर्थात् अनेक प्रकार के। विष्णु शब्द से अरिहन्त को पहचानो, बुद्ध शब्द से अरिहन्त को पहिचानो, कोई जिनेश्वर से अरिहन्त को

पहिचानो। है तो अरिहन्त है ही। अनेक रुचि कहते संसार। **नाना प्रकार के नामों से जिनराज को आराधते हैं।** नाम चाहे वह हो परन्तु वस्तु यह जिनराज। **जिनराज को आराधते हैं।** समझ में आया? **ये नाम जिनराज के सिवाय दूसरे के नहीं हैं। ऐसा ही दूसरे ग्रन्थों में भी कहा है—एक हजार आठ नामों सहित वह मोक्षपुर का स्वामी...** लो, मोक्षपुर का राजा, **उसकी आराधना सब करते हैं।** जितने सम्यग्दृष्टि ज्ञानी हैं, वे मोक्ष के पुर के स्वामी एक हजार आठ नामों से अरिहन्त आदि उसका ही आराधन करते हैं। सम्यग्दृष्टि जीव उसका आराधन करते हैं। दूसरे का आराधन करते नहीं। दूसरा देव-देवला नाम धरावे अन्यमति में अनेक प्रकार, किसी को सम्यग्दृष्टि मानते नहीं। समझ में आया?

उसके अनन्त नाम और अनन्त रूप हैं। अनन्त नम है। ज्ञान ऐसा रूप भी अन्दर स्वरूप है। समझे न? **वास्तव में नाम से रहित है...** नाम उसमें नहीं है। रूप से रहित है। यह कल्पना का रूप उसमें नहीं है। वस्तु स्वरूप है। **ऐसे भगवान देव को हे प्राणियों! तुम आराधो।** यह परमात्मप्रकाश यहाँ पूरा हो गया न? १४ गाथा बाकी हैं, अब बस। ऐसे अरिहन्त परमेश्वर सर्वज्ञ प्रभु एक समय में पूर्ण शक्ति की व्यक्ति हो गयी। ऐसी शक्ति तुझमें है, उसका आराधन करो, उसकी सेवना करो, उस स्वरूप की दृष्टि लगाओ तो अरिहन्त की आराधना की, ऐसा कहा जाता है। लोग तो कहीं के कहीं सिर फोड़ते हैं। जैन के नामधारी उसकी खबर नहीं। कहीं का कहीं कुछ चढ़ा देते हैं। चढ़ जाये विठ्ठल और फीठल को। ऐई! रतिभाई! तुम्हारे बाप थे न। कहाँ के कहाँ। विठोबा-विठोबा। कहीं के कहीं पाखण्ड में चढ़ गये। पाखण्ड-पाखण्ड अकेला। कुछ भान नहीं होता। आहाहा! ऐई! मनसुखभाई! खबर है? ऐसा करते थे, खबर है। ८१ में गढडे आये थे न सब संघ जरा। क्या है कहा यह? विठोबा-विठोबा। विठोबा यह आत्मा है, बाकी दूसरा कोई नहीं। परन्तु बैठे नहीं।

उस प्रकार चौबीस दोहों के महास्थल में परमात्मप्रकाश शब्द के अर्थ की मुख्यता से तीन दोहों में तीसरा अन्तरस्थल कहा। अब सिद्ध स्वरूप की व्याख्या-गाथा चलेगी, लो!

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)